शोध मंथन Vol. XII No.II April-June 2021 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

स्वास्थ्य के संदर्भ में गाँधी दृष्टिः एक अवलोकन

डॉ. माईकल
स्नातकोत्तर गाँधी विचार विभाग,
तिलका माँझी भागलपुर,
विश्वविद्यालय भागलपुर, बिहार
ईमेलः drmaikalbh@gmail.com

प्राप्तिः 12.05.2021
स्वीकृतः 15.06.2021

सारांश

स्वास्थ्य शरीर, मन और आत्मा की सामंजस्यपूर्ण स्थिति है। इस स्थिति में व्यक्ति सभी प्रकार की रुग्नताओं से मुक्त है और उसके सभी अंग–प्रत्यंग सुव्यवस्थित एवं सुनियोजित ढंग से कार्य करते हैं। दूसरे शब्दों में यह आदर्श स्थिति है, जिसमें शरीर स्फूर्तिवान, मन प्रसन्न एवं आत्मा मुदितापूर्ण होती है और दसों इन्द्रियां (पांच कर्मेंद्रियाँ, यथा– हाथ, पाँव, मुंह, जननेंद्रिय एवं गुदा और पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, यथा– आँख, नाक, कान, जिह्वा एवं त्वचा) और मन (ग्यारहवीं इन्द्रिय) का कार्य–व्यवहार सम्पूर्ण (सम्यक्) रूप से चलता है। स्वस्थ शरीर का अर्थ मोटा–तगड़ा शरीर नहीं है, अर्थात् इसमें पहलवानों या अतिशय दौड़ने–कूदने वालों का समावेश नहीं है। वरन् इसका आशय व्याधिरहित शरीर से है, अर्थात् वैसा शरीर जो सामान्य काम कर सके। दूसरे शब्दों में, "जो मनुष्य बगैर थकान के रोज दस–बारह मिल चल सकता है, जो बगैर थकान के सामान्य मेहनत–मजदूरी कर सकता है और सामान्य खुराक पचा सकता है।" जाहिर है कि यहाँ स्वास्थ्य का आशय सहज जीवन से है। वास्तव में जो सहज है, वही स्वस्थ है और सुन्दर भी।

प्रस्तावना

महात्मा गाँधी जोर देकर कहते थे कि शरीर मात्र मल–मूत्र की खान नहीं है, वरन् यह आत्मा का मंदिर भी है। इसलिए, हमें हमेशा अपने शरीर का सदुपयोग करना चाहिए। इसकी रक्षा के लिए हमें ऐसा प्रयत्न करना चाहिए, जिससे यह सेवाधर्म का पालन पूरी तरह से कर सके। वास्तव में, यह शरीर ईश्वर का है। ईश्वर ने यह हमें थोड़े समय के लिए स्वच्छ एवं निरोग्य रखने हेतु और सेवा के निमित्त दिया है। इसलिए हम इसके ट्रस्टी हैं, मालिक नहीं। हमें तरसती या रक्षक के रूप में बहुत सावधानी रखनी चाहिए। हमें शरीर का अच्छा से अच्छा उपयोग करना है। हम शरीर के बारे में चिंता तो नहीं करे, लेकिन यथासंभव इसकी देखभाल अवश्य करें।[1] गाँधी के शब्दों में, "हमें शरीर का अंतराय भी नहीं चाहिए, अर्थात् शरीर रहे या जाए, इस बारे

में हमें तटस्थ रहना चाहिए। मन को हम इस तरह का शिक्षण कर सकें, तो हम शरीर को विषय–भोह का साधन तो कभी नहीं बनाएंगे। तब अपनी शक्ति एवं ज्ञान के अनुसार हम अपने शरीर का सदुपयोग सेवा के लिए, ईश्वर को पहचानने के लिए, उसके जगत को जानने के लिए और उनके साथ ऐक्य साधने के लिए करेंगे।"[2] संक्षेप में, हमें श्रीर्ट को सर्वोदय के आदर्शों के अनुरूप 'जिओ और जीने दो' से आगे 'दूसरों के लिए जिओ' हेतु तैयार करना चाहिए।

मनुष्य का शरीर एक अद्‌भुत यन्त्र हैं जब वह बिगड़ जाता है, तो बिना किसी उपचार या दवा के स्वयं भी अपने को ठीक कर लेता है, बशर्ते की उसे ऐसा करने का मौका दिया जाए।[3] यदि, हम अपनी भोजन की आदतों में संयम का पालन नहीं करते, या हमारा मन आवेश, चिंता आदि से ग्रसित होता है, तो हमारा शरीर अपने अन्दर की सारी गंदगियों को बाहर नहीं निकाल सकता, इससे शरीर रोगग्रस्त हो जता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि शरीर एवं मन एक–दूसरे से गहरे जुड़े हैं। गाँधी तो यहाँ तक कहते थे, "मनुष्य जाति के लिए साधारणतः स्वास्थ्य का पहला नियम यह है 'मन चंगा, तो शरीर भी चंगा। निरोग शरीर में निर्विकार मन का वास होता है, यह एक स्वयंसिद्ध सच्चाई है। मन और शरीर के बीच अटूट संबंध है। यदि मन निर्विकार यानी निरोग हो, तो वह हर तरह की हिंसा से मुक्त हो जाएगा, फिर हमारे हाथों तंदरुस्ती के नियमों का सहज भाव से पालन होने लगेगा और किसी विशेष प्रयास के बिना ही हमारा शरीर तंदरुस्त हो जाएगा।"[4]

गाँधी ने शारीरिक विकारों की अपेक्षा नैतिक विकारों को दूर करने पर अधिक बल दिया। उनकी दृष्टि में कोढ़ जैसे शारीरिक बीमारी से ग्रस्त लोगों की अपेक्षा शराबी, जुआरी या समाज में व्याप्त ऐसी ही अन्य बुराइयों से ग्रस्त लोग अधिक घृणा के पात्र हैं।[5] उन्होंने साफ–साफ कहा–"शारीरिक आरोग्य का जीवन में महत्त्व गौण है; क्योंकि शारीरिक क्षति को तो आदमी सह भी लेता है, लेकिन आत्मा की क्षति को नहीं। इसलिए, आत्मा के आरोग्य पर अधिक ध्यान देना चाहिए।[6] पूर्ण स्वस्थ शरीर और आत्मा की साम्यावस्था है। लेकिन, इस अवस्था को प्राप्त करना काफी कठिन है। गाँधी ने स्वयं लिखा है, "ऐसी साम्यावस्था प्राप्त करना वास्तव में काफी कठिन है। अन्यथा, मैं इसे प्राप्त कर चुका होता; क्योंकि मेरी आत्मा इस बात की साक्षी है कि मैं इस स्थिति की प्राप्ति के कोई भी कष्ट उठाने को तैयार हूँ।"[7]

आहार : जीवन के संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए समुचित आहार की आवश्यकता होती है। मनुष्य– शरीर को स्नायु वाले, गर्मी देने वाले, चर्बी बढाने वाले, क्षार देने वाले और मल निकालने वाले द्रव्यों की आवश्यकता होती है। गाँधी सभी मनुष्यों को समुचित एवं संतुलित आहार सहज उपलब्ध करने पर जोर देते थे। लेकिन, उनकी स्पष्ट हिदायत है, 'हमें जीने के लिए खाना चाहिए, न कि खाने के लिए जीना चाहिए। इसके लिए उनहोंने अपने एकादश व्रत में 'अस्वाद' को प्रमुख स्थान दिया और स्वाद के चक्कर में फंसकर स्वास्थ्य को बर्वाद करने के विरुद्ध चेतावनी दी। साथ ही यह भी कहा कि आहार औषधि है और हमें उसे औषधि की तरह ही उचित

मात्रा में लेना चाहिए– न ज्यादा और न कम। इनके शब्दों में, "हमें सब खुराक औषधियों के रूप में लेनी चाहिए, स्वाद की खातिर हरगिज नहीं।"[8] सप्ताह में एक दिन उपवास करने की सलाह दी है।

विहार : गाँधी यह मानते थे कि रोग के कारण को रोकना पहला है और इसके इलाज के लिए शुद्ध एवं संतुलित आहार के साथ–साथ सम्यक् विहार का भी काफी महत्त्व है। इसके अंतर्गत स्वच्छता, श्रम एवं संयम की बातें शामिल है। हमारे शास्त्रों में कहा गया है– 'स्वच्छता ही देवत्त्व है'। इसलिए, हमें अपने तन, मन एवं जीवन को स्वच्छ एवं पवित्र बनाने की कोशिश करनी चाहिए। लेकिन, अपनी स्वच्छता के साथ–साथ पास–पड़ोस एवं गाँव–समाज की स्वच्छता भी जरुरी है। गाँधी ने कहा है, "आपका पानी, अन्न और हवा ये सब शुद्ध होना ही चाहिए। किन्तु, केवल अपने तक स्वच्छता रखने से हमें संतुष्ट नहीं रहना चाहिए। जो स्वच्छता आप स्वयं के बारे में रखना चाहते हैं, उस स्वच्छता का प्रचार–प्रसार अपने आस–पास भी कीजिए।"[9] गाँधी स्वच्छता के साथ–साथ शारीरिक श्रम पर काफी जोर देते थे और कहते थे कि जो बिना श्रम के खाता है, वह चोर है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि गाँधी के लिए 'श्रम' का अर्थ गुणवत्तापूर्ण एवं उत्पादक कार्यों से था, न कि घर बैठे साइकिलिंग करने या जिम जाकर 'बॉडी बिल्डिंग'से। अलबत्ता वे तो अखाड़े (व्यायामशालाओं) की कसरतों को विकारवर्द्धक मानते थे, क्योंकि उसके परिणामस्वरूप साधारणतः शरीर में गर्मी बढ़ती हैं और भोजन एवं भोग की शक्ति वेगवान हो जाती है। अतः, गाँधी कठोर व्यायाम की बजाय श्रम और आसन एवं प्राणायाम करने की सलाह देते थे। उनहोंने लिखा है, "....आसन एवं प्राणायाम सात्विक व्यायाम माने जा सकते हैं, क्योंकि इन व्यायामों का प्रधान उद्देश्य शरीर को भोगी नहीं, बल्कि शुद्ध बनाना है और इनसे कई बीमारियाँ भी दूर होती हैं।"[10]

गाँधी–दर्शन में स्वच्छता एवं श्रम के साथ–साथ संयम का भी काफी महत्त्व है। संयम के अंतर्गत एकादश व्रतों (सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्पृश्यता निवारण, शारीरिक श्रम, सर्वधर्म समभाव एवं स्वदेशी) के पालन की बातें शामिल हैं। लेकिन, वहां विशेषरूप से ब्रह्मचर्य व्रत की चर्चा लाजिमी है, जिस पर गाँधी ने कुछ ज्यादा ही जोर दिया है। उन्होंने ब्रह्मचर्य को नए अर्थ दिये और कहा कि विवाहित अवस्था में भी इसका पालन होना चाहिए। यही यह उल्लेखनीय है कि ब्रह्मचर्य का सामान्य अर्थ यौन संबंध का त्याग और वीर्य–संग्रह माना जाता है। लेकिन, इसका वास्तविक अर्थ ब्रह्म या ईश्वर की प्राप्ति के लिए चर्चा है। मन एवं जननेंद्रिय सहित अन्य सभी इन्द्रियों पर नियंत्रण रखने से ब्रह्मचर्य की प्राप्ति में सहायता मिलती है। जाहिर है कि पूर्ण ब्रह्मचर्य मात्र वीर्य–रक्षण तक ही सिमित नहीं है, लेकिन इसका यह अर्थ कतई नहीं है कि वीर्य–रक्षण व्यर्थ है। गाँधी तो यहाँ तक कहते थे कि वीर्य–रक्षण के बगैर पूर्ण ब्रह्मचर्य असंभव है और आरोग्य की रक्षा भी अशक्य ही है। उन्होंने जोर देकर कहा, "जिस वीर्य में दूसरे मनुष्य को पैदा करने की शक्ति है, उस वीर्य का स्वयं का व्यर्थ स्खलन होने देना, महान

अज्ञानता की निशानी है। वीर्य का उपयोग भोग के लिए नहीं, वरन् मात्र प्रजोत्पत्ती के लिए है। यह हम पूरी तरह समझ लें, तो विषयासक्ति के लिए जीवन में कोई स्थान ही नहीं रह जाएगा। स्त्री–पुरुष संग की खातिर नर–नारी दोनों जिस तरह अपना सत्यानाश करते हैं, वह बंद हो जाएगा।"[11]

प्राकृतिक उपचार : गाँधी की स्पष्ट मान्यता थी कि प्रकृति (नैसर्गिक) उपचारों का जैसा नाम है, वैसा ही उनका गुण भी है। इसकी सबसे खास बात यह है कि वे कुदरती हैं, इसलिए सामान्य मनुष्य भी निश्चित होकर उनका उपयोग कर सकता है। वास्तव में, प्राकृतिक उपचार एक आदर्श जीवन–पद्धति है।[12] इसमें केवल रोगों के समुचित उपचार की कामना नहीं है, वरन् ऐसी जीवनशैली को अपनाने की प्रेरणा भी है, जिससे बिमारियों के लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रहे। जाहिर है कि यह चिकित्सा एवं स्वास्थ्य दृविज्ञान की सर्वोत्तम पद्धति है। यह इलाज सबके घर में है इसके लिए उपचार करने लेना चाहिए।[13] लेकिन दुर्भाग्य से प्राकृतिक उपचारों की पद्धति हाशिए पर चली गई है और 'आधुनिक एलोपैथी' का साम्राज्य कायम हो गया है। 'एलोपैथी' को बड़े पैमाने पर सरकारी सहायता मिलती है। उसका अपना सुव्यवस्थित शास्त्र है, अपने बड़े–बड़े संस्थान हैं और प्रचार–प्रसार के विपुल साधन भी। इन सब चीजों के दम पर 'एलोपैथी' ने चिकित्सा के क्षेत्र में काफी आधुनिक उपलब्धियाँ भी हासिल की हैं और इसमें कार्यरत डाक्टरों के मन मे एक अभिमान–सा रहता है। इसके विपरीत प्राकृतिक उपचार की पद्धति ('नेचुरोपैथी') उपेक्षित है, उसके शास्त्रीय ज्ञान के संरक्षण एवं संवर्ध्दन की दिशा में कुछ खास नहीं हो रहा है और उस दिशा में लगे लोगों में संघशक्ति का भी घोर अभाव है। एक खास चिंता की बात यह भी है की यह पद्धति अपने स्वाभाविक गुणकर्म को विकसित करने की बजाय 'ऐलोपैथी' की नकल करने में लग गई है। इससे जुड़े कुछ लोग अविश्वसनीय दावे करके अपनी तो जगहँसाई करते ही हैं, 'नेचुरोपैथी'की साख को भी नुकसान पहुँचाते हैं। ऐसे में गाँधी 'नैचुरोपैथी' के पुनरोत्थान हेतु इस क्षेत्र में अत्यंत तेजस्वी मनुष्य को आगे आने की जरूरत बताते हैं, जो इसके दोनों पहलुओं, यथा–ईश्वरीय शक्ति एवं तत्वीय प्रभाव का साक्षात्कार कर चुके हों और दूसरों को भी इसके लिए प्रेरित करने में सक्षम हों। बेशक इस आदर्श को पाना श्रमसाध्य है, लेकिन यह अप्राप्य नहीं है। अतः न केवल आधुनिक चिकित्सा प्रणाली की विफलताओं के मद्देनजर वरन् सच्चे स्वास्थ्य की प्राप्ति की दृष्टि से भी 'सदा जीवन, उच्च विचार' का भारतीय (गाँधीय) सूत्र अनुपलनीय है । हम प्रकृति के जितने करीब जाएंगे, उतना ही हम स्वस्थ, प्रसन्न एवं दीर्घायु जीवन जी सकेंगे।

ईश्वरीय चमत्कार : ईश्वरीय श्रद्धा प्राकृतिक चिकित्सा का एक महत्वपूर्ण अंग है। वास्तव में, यह शक्ति जो कर शक्ति है, सो दूसरी कोई शक्ति नहीं कर सकती। जब मनुष्य में इस अदृश्य शक्ति के प्रति पूर्ण जीवित श्रद्धा पैदा हो जाती है, तब उसके शरीर में मन एवं आत्मा में अमूलचूल परिवर्तन होता है। ऐसा व्यक्ति अपने सारे शारीरिक एवं मानसिक विकारों एवं संतापों

को भूलकर खुद को ईश्वर में तदाकार कर लेता है। वह हरपल ईश्वर–स्मरण में ही लीन हो जाता है और ईश्वर के नाम का जाप करते रहता है। गाँधी ने 'रामनाम' के जाप की सलाह दी है। यहाँ 'रामनाम' मात्र सांकेतिक है, रोगी (व्यक्ति) अपनी श्रद्धानुसार 'ऊँ', 'अल्ला', 'गॉड' किसी भी नाम का जाप कर सकता है।

तत्वीय प्रभाव : गाँधी यह मानते थे कि शरीर जगत का एक छोटा–सा नमूना है। जो जगत में है, वह शरीर में है और जो जगत में नहीं है, वह शरीर में भी नहीं है। इसलिए, यदि हम शरीर को पूर्णतया पहचान सके, तो हम जगत को भी सहज ही पहचान लेंगे। लेकिन, यह काम काफी कठिन है। फिर भी इतना तो सभी मानते हैं कि मानव शरीर सामान्यतः पंचभूत, यथा–पृथ्वी (मिट्टी), जल (पानी), पावक (अग्नी), गगन (आकाश) उर समीर (वायु) से बना है। गाँधी कहते थे कि मनुष्य का पुतला जिन चीजों से बना है, उन्हीं से, वह इसका इलाज ढूंढे, अर्थात् पंचतत्व ही प्राकृति चिकित्सा (नैसर्गिक उपचार), के साधन हैं।[14]

संक्षेप में, पंचतत्वों के चिकित्सीय गुण इस प्रकार हैं

1. पृथ्वी (मिट्टी) : गाँधी ने अपने जीवन में प्राकृतिक चिकित्सा के जो सैकड़ों सफल प्रयोग किये, उनमें उन्होंने मिट्टी का एक तरह से सर्वाधिक इस्तेमाल किया। उन्होंने स्वयं अपने कब्ज का इलाज भी मिट्टी की एक विशेष पट्टी को रात्रि में अपने पेट पर रखकर किया। वह पट्टी तीन इंच चौड़ी, छह ईंच लंबी और आधा ईंच मोटी होती थी। इसके अलावा सरदर्द, फोड़ा–फुंसी, बिच्छु डंक, सख्त बुखार एवं टायफाइड आदि में भी मिट्टी का प्रयोग फायदेमंद रहता है। यहाँ यह ध्यान रखने की बात है कि मिट्टी न तो बहुत चिकनी होनी चाहिए, न ही बिल्कुल रेतीली या खाद वाली और उसे खूब अच्छी तरह से सुखाकर एवं साफ करके ही प्रयोग में लाना चाहिए।[15]

2. जल (पानी) : प्राकृतिक चिकित्सा–पद्धति में जल के प्रयोग की परंपरा काफी पुरानी है और गाँधी ने भी इस पर काफी विचार किया है। उनके विचारों से ऐसा लगता है कि वे विशेषरूप से 'क्युने–बात' के प्रति काफी आकर्षित थे। 'क्युने–बाथ' की दो विधियाँ हैं– 'मध्यबिंदु कटि–स्नान, और 'घर्षण–स्नान'। एक, 'मध्यबिंदु कटि–स्नान' में व्यक्ति को खुले कमरे में रखे ठन्डे पानी के टब में पैर को पानी से बाहर रखकर बैठ जाना चाहिए और पाँच मिनट से लेकर तीस मिनट तक पेडू पर नरम तौलिए से धीरे–धीरे घर्षण करना चाहिए। पुनः, स्नान के बाद गिले हिस्से को सुखाकर बिस्तर में आराम से सो जाना चाहिए। यह स्नान सख्त बुखार, कब्जियत, अजीर्ण आदि रोगों में लाभकर है और इससे शरीर में स्फूर्ति भी आती है। दूसरा, 'घर्षण–स्नान में पानी के टब में एक स्टूल रखकर उस पर बैठ जाना चाहिए, (स्टूल की बैठक पानी की सतह से थोड़ी ऊँची हो) और जननेंद्रिय के सिरे पर भींगे हुए नरम रुमाल से धीरे–धीरे घर्षण करना चाहिए। इस स्नान से जननेंद्रिय को साफ–सुथरा रखने और ब्रह्मचर्य के पालन में मदद मिलाती है।[16] इसके अलावा गाँधी ने 'चादर–स्नान' की भी चर्चा की है। इसके अंतर्गत मोटे कंबल पर भींगी हुई, सूती चादर बिछाई जाती है और उस पर रोगी (व्यक्ति) को सुला दिया जाता है। उसका सर

कंबल के बाहर तकिए पर रखा जाता है और सर पर गिला निचोड़ा हुआ तौलिया रखकर शरीर के अन्य हिस्से को अच्छी तरह से चद्दर एवं कंबल से ढँक दिया जाता है। यह विधि बुखार (निमोनिया एवं टाईफाइड) के अलावा घमौड़ी, पित्ती, आमवात, खुजली, खसरा या चेचक आदि में भी लाभकारी है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इन विशिष्ट विधियों के अलावा सामान्य रूप से भी पानी का इस्तेमाल कर कई बीमारियों में राहत मिल सकती है। विशेषकर गाँधी ने तो गर्म पानी का आरोग्य की दृष्टि से खूब इस्तेमाल किया। ये मानते थे कि गर्म पानी जीवाणुनाशक है और उसके समुचित प्रयोग से कई तरह के घावों को ठीक किया जा सकता है। भाप के रूप में भी पानी काफी गुणकारी है। इसस सर्दी, कंपकपी, गठिया एवं मोटापा आदि बीमारियों में लाभ मिलता है।

3. पावक (अग्नि) : गाँधी ने पावक (अग्नि) या तेज को भी प्राकृतिक चिकित्सा का महत्त्वपूर्ण साधन माना है। जैसा कि हम जानते हैं कि तेज का सर्वप्रथम स्रोत सूर्य है और उसी से पूरी सृष्टि को ऊर्जा मिलती है। गाँधी कहते हैं कि यदि हम सूर्य के प्रकाश का पूरा उपयोग करें, तो हम पूर्ण आरोग्य का अनुभव कर सकते हैं। जैसे हम पानी का स्नान करके साफ होते हैं, वैसे ही सूर्य–स्नान करके भी हम साफ एवं तंदरुस्त हो सकते है। गाँधी ने सूर्य–स्नान को शारीरिक दुर्बलता, चहरे के परिकापन और पाचनतंत्र की गड़बड़ी में भी लाभदायक बताया है।

4. गगन (आकाश) : सामान्यतः हम पृथ्वी के चारों और घिरे आसमानी शामियाने को आकाश कहते हैं। लेकिन, सिर्फ वही आकाश नहीं है। बल्कि, जहां कहीं भी खालीपन या शून्य है, वह आकाश है। इस अर्थ में आकाश हर जगह मौजूद हैं– हामारे बाहर भी और अन्दर भी। गाँधी के अनुसार जिस तरह हामारे आसपास आकाश हैं, उसी तरह हमारे भीतर भी वह है। चमड़ी के एक–एक छिद्र में और दो छिद्रों के बीच की जगह में भी आकाश है। इसलिए, ऐसे महान तत्व (आकाश) का अभ्यास और उपयोग जितना हम करें, उतना ही अधिक आरोग्य का उपयोग कर सकेंगे। इसके लिए हमें जीवन में उत्तरोत्तर 'खालीपन' (अकाश) को बढ़ाना होगा, अर्थात् अपनी आवश्यकता कम करनी होगी। हम उतना ही आहार लें, जितना आवश्यक हो, आवश्यकता से अधिक कपड़े नहीं पहनें और अपने आवास को भी कबाड़खाना नहीं बनाएं। हम अपने जीवन में उत्तरोत्तर खालीपन को बढ़ाकर आकाश के साथ सीधा संबंध बनाएं। जैसे–जैसे यह संबंध बढता जाएगा, वैसे आरोग्य भी बढ़ता जाएगा हमारी, मेरी शान्ति बढ़ती जाएगी, संतोष बढ़ता जाएगा और धनेच्छा बिलकुल मंद पहली जाएगी।

5. वायु (हवा) : हवा एक तरह से सर्व्यापक है और जीवन के लिए इसकी सर्वाधिक आवश्यकता है। जहां सांस लेने के लिए हवा नहीं हो, वहां जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। लेकिन, दुर्भाग्य यह है कि आधुनिक जीवनशैली ने हमें हवा से काफी दूर कर दिया है, एक तो विभिन्न मानवीय क्रियाकलापों ने वायु–प्रदूषण का खतरा उत्पन्न किया है। दूसरा, हम अक्सर अपने आवास में वायु एवं प्रकाश के प्रवेश को बाधित कर आरोग्य को खतरे में डाल

देते हैं। गाँधी का कहना है कि हमें अन्य प्राकृतिक तत्त्वों के साथ–साथ हवा भी सम्यक् उपयोग करना चाहिए।".....यदि हम बचापन से ही हवा का डर न रखें, तो शरीर को हवा सहन करने की आदत हो जाती है और जुकाम, बलगम इत्यादि रोगों से हम बच जाते हैं।

डॉक्टर और अस्पतालः गाँधी यह मानते थे कि प्रायः सभी रोग हमारी गफलत या गलत जीवनशैली के परिणाम है। इसलिए, रोगों से बचने का सबसे अच्छा तरीका अपनी जीवनशैली में सुधार लाना है। लेकिन, यदि हम अपनी जीवनशैली को बदले बैगर डाक्टर से अपना इलाज कराने लगते हैं, तो घातक प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए यदि किसी को बहुत ज्यादा खा लेने के कारण बदहजमी या अजीर्ण हो जाए, फिर वह डाक्टर के पास जाए और डाक्टर के पास जाए और डाक्टर उसे दवा दे। वह डाक्टर की दवा खाकर चंगा हो जाए और दुबारा उसी तरह खूब खाए एवं पुनः डाक्टर की गोली ले। यह एक तरह से शरीर को प्रताड़ित करना और रोगों को आमंत्रण देना है। गाँधी मानते थे कि यदि वह व्यक्ति दवा नहीं लेता, तो वह अजीर्ण की सजा भुगतना और फिर बाद में ज्यादा खाने से परहेज करता, लेकिन यहाँ डाक्टर ने दवा देकर एक तरह से उस व्यक्ति को बार–बार ज्यादा खाने के लिए प्रेरित किया। इससे उस व्यक्ति के शरीर को तो थोड़ी देर के लिए आराम हुआ, लेकिन उसका मन कमजोर बना। गाँधी ने डाक्टरों में बढ़ती अर्थलिलुपता पर भी गहरी चिंता व्यक्त की है। उन्होंने लिखा है, "उस धंधे में सच्चा परोपकार नहीं है। डाक्टर सिर्फ आडंबर दिखाकर ही लोगों से बड़ी–बड़ी फीसें वसूलते हैं और अपनी एक पैसे की दवाई के कई रूपए लेते है। अंधे विशवास के कारण और चंगे हो जाने की आशा में लोग उनसे ठगे जाते हैं।[17]

गाँधी मानते थे कि अस्पताल, पाप की जड़ है। उसकी बदौलत लोग शरीर का जतन कम करते हैं और अनीति को बढ़ाते है। उन्होंने साफ– साफ लिखा है, "डाक्टरों और अस्पतालों की वृद्धि कोई सच्ची सभ्यता की निशानी नहीं है। उनकी यह बात भी ठीक जंचती है; क्योंकि बड़े–बड़े डाक्टर एवं अस्पताल उस अंतिम व्यक्ति का कोई ख्याल नहीं रखते हैं, जो गाँधी–दर्शन के केंद्र में है। इसलिए आधुनिकता एवं विकास से कथित तौर पर लाभान्वित चंद लोग चाहे आधुनिक चिकित्सा पद्धति का जितना भी गुणगान कर लें, यह आम जनता का हृदयहार नहीं बन सकती है। गरीब, पीड़ित एवं वंचित वर्ग को चाहे–अनचाहे प्रकृति एवं प्राकृतिक चिकित्सा की शरण में ही जाना पड़ेगा। गाँधी के शब्दों में कहें, तो इस देश में फार्मेसियों की संख्या बढ़ते देखने की मेरी कोई इच्छा नहीं है, बल्कि मैं तो चाहूँगा कि लोग दवाओं की दासता से मुक्त हो जाएं।

निष्कर्ष : आज से सौ साल पहले कही गई गाँधी की इन बातों की सच्चाई को हम सभी अपने जीवन में महसूस कर सकते हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि आधुनिक चिकित्सा–पद्धति बाजारवाद की गिरफ्त में है और इसमें नैतिकता का ह्रास होता जा रहा है। कई बार जिंदा जानवरों की नहीं, वरन् गरीब मुल्क के लोगों पर भी दवाइयों का अनावश्यक परीक्षण किया जाता है और इसमें बड़े पैमाने पर हिंसा होती है, जो गाँधी–दर्शन के प्रतिकूल है। साथ ही अक्सर रोगों का भय पैदाकर भी लोगों को लूटने का इंतजाम किया जाता है और आज गाँधी की वह बात भी सही हो रही है कि बीमारी से अधिक, उसके भय से पीड़ित हैं। यह बात निर्विवाद है कि

तंदुरुस्ती के नियमों को न जानने से और उन नियमों के पालन में लापरवाह रहने से ही ज्यादातर रोग होते है। अतः संयम और सादगी आदि गांधीवादी मूल्यों को अपनाकर पूर्ण स्वास्थ की स्थिति को प्राप्त किया जा सकता है। यही 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' एवं 'सर्वे सन्तु निरामया' के आदर्शों की भी मूल भावना है, जो न केवल मनुष्य, वरन् मनुष्येतर जीव–जंतुओं, पेड़–पौधों एवं सम्पूर्ण चराचर जगत के स्वस्थ एवं प्रसन्न जीवन की कामना करता है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. अरुण, ए. के.; *'महात्मा गाँधी का स्वास्थ्य–चिंतन'*, मीडिया, प्रधान संपादकः शंभुनाथ, संपादकः श्रीशचंद्र जैसवाल, केन्द्रीय हिंदी संस्थान, नई दिल्ली, अंकः 4, अक्तूबर–दिसंबर 2007–जनवरी–मार्च 2008, (संयुक्तांक), पृ0 **104**
2. गाँधी; *आरोग्य की कुंजी*, अनुवादिकाः सुशीला नैयर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद (गुजरात), पृ0 **47**
3. देसाई, मोरारजी; *'प्राक्कथन', कुदरती उपचार,* मूल लेखक :गाँधी संपादक : भारतन् कुमारप्पा, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद (गुजरात), पृ0 **3**
4. अरुण, ए. के.; *मन चंगा, तो शरीर गंगा',* गाँधी–मार्ग, संपादकः अनुपम मिश्रा, गाँधी शांति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, जनवरी–फरवरी 2009, पृ0 **34**
5. गाँधी; *सम्पूर्ण गाँधी वांग्मय,* प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, खण्डः 48, पृ0 **458**
6. गाँधी, हिन्दी नवजीवन, 6 अक्तूबर, 1927
7. अरुण, ए. के.; *मन चंगा, तो शरीर गंगा',* गाँधी–मार्ग, संपादकः अनुपम मिश्रा, गाँधी शांति प्रतिष्ठान, नई दिल्ली, जनवरी–फरवरी 2009, पृ0 **35**
8. गाँधी; आरोग्य की कुंजी, अनुवादिकाः सुशीला नैयर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद (गुजरात),पृ0 **15**
9. धर्माधिकारी, चंद्रशेखर; गाँधी–विचार और पर्यावर, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी (उत्तर प्रदेश), प्रथम संस्करण–2009, पृ0 **26–27**
10. मशरूवाला, किशोरलाल; गाँधी विचार–दोहन, सस्ता साहित्य–मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण–1995, पृ0 **150.**
11. गाँधी; *आरोग्य की कुंजी,* अनुवादिकाः सुशीला नैयर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद (गुजरात),पृ0 **28**
12. गाँधी; *आरोग्य की कुंजी,* अनुवादिकाः सुशीला नैयर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद (गुजरात),पृ0 **40**
13. गाँधी; *हरिजन सेवक,* 2 जून, 1946
14. गाँधी, *रामनाम,* नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद (गुजरात), 1949.
15. गाँधी; *आरोग्य की कुंजी,* अनुवादिकाः सुशीला नैयर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद (गुजरात),पृ0 **34**
16. गाँधी; *आरोग्य की कुंजी,* अनुवादिकाः सुशीला नैयर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद (गुजरात),पृ0 **50**
17. शेखर, सुधांशु, *जीवन जीने की कला और गाँधी', गाँधी–दर्शनः एक पुनरवलोकन,* संपादकः डॉ. श्यामल किशोर, जानकी प्रकाशन, पटना (बिहार) 2014. पृ0 **296–297**